

फ्रांसिसी (1789 A.D.) क्रान्ति के कारणों का मूल्यांकन करें ।

Notes for BA (Hons) History, Part - II

Dr. Md. HAIDER ALI

Assistant Professor, Dept of History

R.B.G.R. College, Maharajganj, JPU, Chapra

1789 ई. में फ्रांस में एक क्रान्ति हुई । इस क्रान्ति ने सरकार के सन्दर्भ में ऐसी विचारधारा को जन्म दिया जिसने यूरोप के इतिहास पर महान् एवं स्थायी प्रभाव डाला । क्रान्तियों के सन्दर्भ में आम लोगों की यह धारणा है कि इनका विस्फोट आर्थिक दृष्टि से दबे हुए तथा विखण्डित होने के कगार पर खड़े समाज में ही होता है ।

लेकिन, क्रान्ति के पूर्व फ्रांस यूरोप का सर्वाधिक प्रगतिशील राष्ट्र था । जनसंख्या, कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन तथा विदेशी व्यापार में यह यूरोप का अग्रगण्य देश था । सांस्कृतिक दृष्टि से भी वह यूरोप पर छाया हुआ था । इस कारण जब फ्रांस में क्रान्ति का विस्फोट हुआ तो सारे यूरोप में आश्चर्य छा गया ।

1. असन्तुलित अर्थ-व्यवस्था:

इस सामान्य तथा अनुकूल परिस्थिति में फ्रांस के जनजीवन में वे कौन-सी त्रुटियाँ थीं जिनकी वजह से क्रान्ति का विस्फोट अवश्यम्भावी हो गया ? सबसे बड़ी त्रुटि यह थी कि फ्रांस में राष्ट्रीय सम्पत्ति का वितरण अत्यन्त ही असमान और अन्यायपूर्ण था ।

पिछले पचास वर्षों में फ्रांस के विदेश-व्यापार में पाँच गुनी वृद्धि हुई थी । इस वृद्धि से व्यापारी वर्ग काफी लाभान्वित हुआ था । खाद्यान्नों की चढ़ती हुई कीमतों से कुलीनों और पादरियों को भी बड़ा लाभ हो रहा था ।

लेकिन, इस समृद्धि से आबादी के दूसरे तबके के लोग लाभान्वित नहीं हो रहे थे-खासकर पारिश्रमिक पाने वाले मजदूरों की हालत उत्तरोत्तर खराब होती जा रही थी । जहाँ उपभोक्ता वस्तुओं की कीमत में 65% की वृद्धि हुई थी, वहाँ पारिश्रमिक दर में केवल 22% की वृद्धि हुई थी ।

अतः मजदूरी पर आश्रित लोग बड़े परेशान थे । शहर और देहात दोनों ही जगह मजदूरी कमाने वाला एक महत्वपूर्ण सर्वहारा वर्ग था जो भावी क्रान्ति में एक निर्णायक भूमिका अदा करने वाला था ।

फ्रांस के किसान भी अपनी स्थिति से असन्तुष्ट थे । यह ठीक है कि जमीन के तीस से चालीस प्रतिशत तक के वे मालिक थे । लेकिन, खाद्यान्नों की चढ़ती हुई कीमतों से उन्हें कोई लाभ नहीं हो रहा था ।

वे अपनी अपेक्षाकृत छोटे जोतों में इतनी पैदावार नहीं कर पाते थे कि अपने परिवार को खिलाकर तथा चर्च और सामंती करों को चुकाकर बाजार में बेचने के लिए अन्न बचा सकें ।

पूर्वी यूरोप के किसानों की अपेक्षा उनकी स्थिति जरूर अच्छी थी। फिर भी, वे सन्तुष्ट नहीं थे और मौजूदा व्यवस्था में आमूल परिवर्तन चाहते थे। फ्रांसीसी अर्थव्यवस्था की समृद्धि के सम्बन्ध में हमें फ्रांस की सरकार की चिन्तनीय आर्थिक स्थिति पर भी ध्यान देना होगा।

देश की सम्पदा तो बढ़ रही थी, लेकिन फ्रांस की सरकार गरीब होती जा रही थी। सुविधायुक्त सम्पन्न वर्ग किसी प्रकार का कर देने को तैयार नहीं था। इस हालत में राज्य का खर्च चलना मुश्किल था। ऐसी हालत में सरकार ने कर्ज माँगना शुरू किया और कर्ज से ही सरकारी काम चलने लगा।

1788 ई. यह स्थिति हो गयी कि सरकार को अपने राजस्व का आधे से अधिक भाग कर्ज का सूद चुकाने में ही खर्च करना पड़ रहा था। यह स्थिति एक लम्बे अरसे तक नहीं चल सकती थी।

अतः क्रांति के विस्फोट के पहले के दशक में राजा सोलहवें लूई ने कई वित्तमन्त्रियों को नियुक्त करके स्थिति को सुधारने का यत्न किया। लेकिन, सुविधायुक्त वर्गों के विरोध के कारण इन सभी प्रस्तावित सुधारों को छोड़ देना पड़ा।

जब राजा आर्थिक सुधारों को कर पाने में असमर्थ हो गया तो उसको विवश होकर 175 वर्षों के बाद स्टेट्स जनरल का अधिवेशन बुलाना पड़ा। फ्रांस में इसी संस्था को नया कर लगाने का अधिकार था। स्टेट्स जनरल की सभा शुरू होते ही घटनाओं की वह श्रृंखला प्रारम्भ हुई जिसने क्रांति के विस्फोट को अवश्यम्भावी बना दिया।

2. सामाजिक वर्ग-वैमनस्यता:

सामाजिक वर्ग-विद्वेष एवं वर्ग-वैमनस्यता क्रांति का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण था। पुरातन व्यवस्था के अन्तिम वर्षों में फ्रांस में वर्ग-विद्वेष अत्यन्त तीव्र हो चला था। फ्रांसीसी समाज तीन वर्गों में विभक्त था- पादरी, कुलीन और सर्वसाधारण।

सर्वसाधारण वर्ग में बुर्जुआवर्ग के लोग भी आते थे। यह बुर्जुआवर्ग विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग से बड़ा रुष्ट था और उनके प्रति अत्यन्त आक्रामक होता जा रहा था। इस वर्ग की आर्थिक स्थिति काफी अच्छी थी।

लेकिन, वे उन अवरोधों के प्रबल विरोधी थे जो अब भी सामंती व्यवस्था के कारण उनकी प्रगति को रोक रहे थे। उनकी प्रमुख शिकायत कुलीनों के विरुद्ध थी। कुलीनों के सन्दर्भ में इस वर्ग के किसी व्यक्ति के समक्ष केवल दो विकल्प थे।

वे या तो स्वयं कुलीन बन सकते थे या कुलीनों के विशेषाधिकारी को समाप्त करने का यत्न कर सकते थे। क्रांति के पहले दो दशकों में बुर्जुआवर्ग ने पहले विकल्प को ही चुना। कुलीन स्तर वाले किसी पद को खरीदकर वे इस वर्ग में प्रवेश पाने लगे। बुर्जुआवर्ग के जिन लोगों ने इस तरीके से कुलीनता प्राप्त कर ली थी उन्हें 'नोबिलिटी आफ दी रोब्स' कहा जाता था।

परम्परागत कुलीनों को 'नोबिलिटी आफ दी सोर्ड्स' कहा जाता था। नव-धनाढ्य बुर्जुआवर्ग जिन्होंने धन के बल पर कुलीनता प्राप्त कर ली थी उनसे परम्परागत कुलीन जलते थे और उनमें ईर्ष्या निरन्तर बढ़ रही थी।

विशुद्ध कुलीन कुलीनता के समाज में बुर्जुआवर्ग के प्रवेश को रोकना चाहते थे। कुलीनों के इस विरोध के कारण 1760 ई. के बाद बुर्जुआवर्ग के लोगों को ऐसी नियुक्तियाँ प्राप्त कर सकना कठिन हो गया जिनसे वे कुलीनता प्राप्त कर सकते थे।

फ्रांसीसी कुलीन वर्ग के सदस्यों ने अपने स्थान को सुरक्षित तथा विशेषाधिकारों को सिर्फ अपने लिए सीमित रखने के लिए अपने सामर्थ्यानुसार बहुत कुछ किया। कुलीनों ने सेना, चर्च तथा सरकार के उच्च पदों पर होने वाली नियुक्तियों पर अपना स्वत्वाधिकार पुनः प्राप्त करने तथा निम्न वर्ग में जन्म लेने वाले बुर्जुआओं के साथ सामाजिक सम्पर्क की प्रथा को निरुत्साहित करने का प्रयास किया।

कुलीनों के इस रवैये ने बुर्जुआवर्ग के मन में भयंकर खिन्नता उत्पन्न कर दी। कुलीनों के घमण्ड ने बुर्जुआओं को नागरिक समानता, प्राकृतिक अधिकार तथा अवसर की समानता आदि पर बल देने की इच्छा को बलवती बनाया। निराशा का यह भाव उच्च बुर्जुआओं में सबसे अधिक था।

लेकिन, जन्म के आधार पर बरती जा रही भेदभाव की नीति से छोटे-मोटे दुकानदार, नौकरशाह, कलाकार आदि भी नाराज थे। यही कारण है कि इस वर्ग के लोगों ने क्रांति में अत्यन्त सक्रिय भाग लिया

3. कृषकों का शोषण:

किसानों के लगातार तथा व्यवस्थित शोषण ने फ्रांस में वर्ग-विद्वेष की भावना को और भी तीव्र कर दिया। फ्रांस के अस्सी प्रतिशत लोग किसान थे। वहाँ एक विकसित कृषि-प्रथा थी और कम्मी प्रथा लगभग समाप्त हो चुकी थी। पूर्वी यूरोप के किसानों से फ्रांसीसी किसानों की हालत निश्चय ही बेहतर थी।

फ्रांसीसी किसानों को बेगारी नहीं करनी पड़ती थी। किसान या तो अपनी जमीन पर या किराये पर ली गयी जमीन पर अपने लिए काम करता था या फिर बटाईदार के रूप में काम करता था या स्वामी के लिए अथवा किसी दूसरे किसान के लिए भाड़े पर काम करता था।

कृषि-व्यवस्था में इस परिवर्तन के बावजूद कई सामंती बन्धन अब भी किसानों को परेशान-कर रहे थे। ये पुराने सामंती बन्धन थे, जिनमें शुल्क, बकाया तथा सामान के रूप में जमींदारों को की जाने वाली अदायगी आती थी।

किसानों की जोत पर कुलीनों ने अपना अन्तिम अधिकार बनाये रखा था। पादरियों को टाइथ नामक कर के साथ-साथ अन्न और फार्म के अन्य उत्पादों पर लेवी देनी होती थी। यह किसानों के लिए बड़ा कष्टकर होता था।

इन पारम्परिक उत्तरदायित्वों के ऊपर छादा गया एक और अपेक्षाकृत आधुनिक बोझ था, राजकीय कर जो कृषक वर्ग को सबसे अधिक भारी पड़ा। यह था टैली नामक प्रत्यक्ष कर तथा गैबली नामक नमक कर।

नमक पर सरकार के स्वत्वाधिकार ने इस वस्तु की कीमत कृत्रिम रूप से चढ़ा रखी थी। क्रांति-पूर्व के दशक में इन उत्तरदायित्वों के प्रति किसानों की नाराजगी बहुत अधिक बढ़ गयी थी।

यह नाराजगी तो बहुत पहले से चली आ रही थी, पर दो नयी बातों ने 1750 ई. के बाद किसानों के विरोध को और भी तीव्र बना दिया। एक था, किसानों की आबादी में निरन्तर वृद्धि जिसके कारण प्राप्त जमीनों पर अपने परिवार के भरण-पोषण के कार्य किसानों के लिए उत्तरोत्तर कठिन हो रहा था।

दूसरा था, किसानों पर अपने अधिकारों को फिर से कायम करने का कुलीनों का प्रयास। कुलीन लोग अपने अधिकारों को जताने के लिए ग्राम की आम जमीन पर कब्जा करते जा रहे थे।

इन जवानों पर किसान परम्परागत रूप से अपने मवेशियों को चराता था, पेड़ काटता था और सूखी लकड़ियाँ बटोरता था। जब कुलीनों ने इन आम जमीनों पर अपना दावा स्थापित कर लिया, तो किसानों का जीवन बड़ा ही कष्टमय हो गया।

इसके फलस्वरूप भूमिपतियों के विरुद्ध किसानों के मन में विद्वेष की वृद्धि हुई। 1789 ई. में किसानों को शिकायतों की बनायी गयी सूची से यह स्पष्ट होता है। सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के इस संक्षिप्त अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अठारहवीं सदी के अन्तिम चरण तक फ्रांस में काफी बलवान वर्ग-वैमनस्य पनप चुका था।

सुविधाहीन वर्गों की कुछ शिकायतें बहुत पुरानी थीं, लेकिन 1750 ई. के बाद खाद्यान्नों की चढ़ती हुई कीमतें, किसानों की आबादी में निरन्तर वृद्धि तथा अन्त में कुलीनों के द्वारा अपने विशेषाधिकारों पर फिर से जोर डालने तथा अलगाव बनाये रखने की प्रक्रिया ने इन्हें तीव्र कर दिया।

इन सभी तथ्यों ने विशेषाधिकारहीन वर्गों में नैराश्य की घोर भावना भर दी और एक बार जब क्रांति प्रारम्भ हो गयी, तो इस भावना ने इसे अतुलनीय क्षोभयुक्त जन-आन्दोलन में बदल डाला।

4. निरंकुश राजतन्त्र की कमजोरी:

सामाजिक-आर्थिक त्रुटियों के उपरान्त फ्रांस के राजनीतिक जीवन की दुर्बलताओं के बारे में बहुत कुछ कहा जा सकता है। फ्रांस में एक परम निरंकुश राजतन्त्रीय व्यवस्था थी। निरंकुशता की यह परम्परा चौदहवें लूई के जमाने से ही चली आ रही थी।

उसके प्रयासों से राजा के हाथों में असीम अधिकारों का संकेन्द्रण हो गया था। वह कार्यकारिणी, विधायनी और न्यायिक सभी शक्तियों का स्रोत था। उसके शब्द ही कानून थे। लेकिन, विडम्बना यह थी कि राजा के पास इन अधिकारों को प्रयुक्त करने की क्षमता नहीं रह गयी थी।

फ्रांस में इस समय एक ऐसा शासन था जो समुचित राजस्व उगाह पाने में भी असमर्थ था। यह स्पष्टतः उसकी राजनीतिक प्रभावहीनता का सबूत था। राजकीय शासन-व्यवस्था विभिन्न कार्यालयों, संस्थाओं तथा एजेन्सियों की कई परतों से बनी थी।

ये परतें सदियों से एकत्र होती आ रही थीं जो स्पष्टतः परिभाषित नहीं थीं। कभी-कभी इनके कार्यक्षेत्र आपस में एक-दूसरे के विरोधी होते थे। इनमें सामान्यतः अव्यवस्था और अयोग्यता व्याप्त थी।

इतनी सख्त नौकरशाही से काम लेना किसी को भी निराश करने वाला था। पर, उद्यमी, व्यापारियों और छोटे भूमिपतियों के लिए यह विशेष रूप से कष्टकर था। अन्तिम बात यह है कि ऐसे शासन में जो वास्तव में नहीं, पर सिद्धान्त रूप में निरंकुश था, शासक का चरित्र बड़ा ही महत्वपूर्ण होता है।

इस दृष्टि से बुर्बो राजवंश बड़ा ही दुर्भाग्यशाली था। तीक्ष्ण बुद्धिवाला तथा दृढ़ निश्चयवाला शासक समय की पुकार थी। पर फ्रांस को 1774 ई. में लूई सोलहवें के रूप में एक ऐसा शासक मिला जो ईमानदार तथा अच्छे इरादोंवाला तो था, पर जिसमें इच्छा-शक्ति का सर्वथा अभाव था तथा जो परिस्थिति के खतरों को भाँप पाने में असमर्थ था।

क्रांति के प्रसिद्ध इतिहासकार जार्ज लेफेब्रे ने उसके विषय में कहते हुए लिखा है- "शायद ही कोई शंका है कि अगर इस समय राजगद्दी पर कोई हेनरी चतुर्थ और लूई चौदहवाँ होते, तो फ्रांस में घटनाएँ कुछ दूसरे रूप में घटित होतीं।"

सोलहवें लूई की मूर्खता क्रांति के विस्फोट के लिए सीधी तरह से जिम्मेवार थी। मन्द बुद्धिवाला यह व्यक्ति आन्तरिक शक्ति या दृढ़ मनोबल के सहारे नहीं, वरन् अपने दरबारियों के दबाव में पड़कर सक्रिय होता था।

जिस समय वह गद्दी पर बैठा, उसने अपने आपको एक क्रांतिकारी परिस्थिति के मध्य पाया। सार रूप में परिस्थिति यह थी कि लूई, जो फ्रांस की सभी राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्थाओं का केन्द्र-बिन्दु था, उस समय गम्भीर आर्थिक संकटों से घिरा था।

इस परिस्थिति के प्रति लूई सजग था। इसी कारण अपने शासन के प्रथम सात वर्षों में उसने अपने मन्त्रियों के माध्यम से सुधार की नीति अपनाने का साहसिक प्रयास किया।

एक के बाद एक तुर्जो और नेकर नामक उसके दो मन्त्रियों ने राजकीय वित्त को अधिक ठोस धरातल पर रखने का प्रयास किया। लेकिन, निहित स्वार्थों के दबाव में आकर राजा को उन्हें बर्खास्त कर देना पड़ा और इसके साथ ही राजा द्वारा स्वतः सुधार लाने के प्रयासों का अन्त हो गया।

तुर्जो और नेकर अपनी अयोग्यता के कारण नहीं, वरन् राजा के चरित्र के कारण असफल रहे। यदि राजा ने उनको दृढ़ समर्थन दिया होता, तो कुछ सफलता उन्हें जरूर मिली होती और सम्भव था कि परिस्थिति पर नियन्त्रण हो जाता।

लेकिन, राजा अपने दरबारियों के समक्ष झुक गया और यह बात बड़ी घातक सिद्ध हुई। इस घटना के बाद राजा के समक्ष एक ही विकल्प रह गया- स्टेट्स जनरल की बैठक बुलाना और इसी बैठक ने क्रांति को जन्म भी दिया।

ऐसा तो होना ही था, क्योंकि इस्टेट्स जनरल के बुलाने से ही उदारवादी सुधारों की आशा जग गयी और इस क्रिया ने बहुत सारे लोगों को एक साथ एकत्र कर दिया, जो राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिए उतावले थे।

इसने विशेषाधिकार वर्ग और विशेषाधिकारहीन वर्ग के प्रतिनिधियों को आमने-सामने लाकर खड़ा कर दिया जिनके बीच एक संघर्ष होना निश्चित था। फिर भी, इस घोर क्रांतिकारी स्थिति को भी नियन्त्रित किया जा सकता था यदि राजा में सूझ-बूझ से काम लेने की सामर्थ्य रहती।

आवश्यकता केवल इतनी ही थी कि राजा किसी तरह विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों को अपने विशेषाधिकार तथा आर्थिक छूटों को छोड़ देने पर राजी करा लेता। यदि संकट को पूरी तरह टाला नहीं जा सकता था तो कई तरीकों से उसे आसान तो अवश्य ही बनाया जा सकता था, ताकि क्रांति हिंसा का रास्ता अख्तियार न करे।

यदि राजा ने ऐसे योग्य मन्त्री पाये या रखे होते जिनकी उन क्षणों की आवश्यकताओं पर पकड़ होती और वे स्टेट्स जनरल का उपयोग सांविधानिक तथा आर्थिक सुधारों की एक स्पष्ट व्यापक नीति तैयार करने के लिए कर पाते तब ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि क्रांति के प्रवाह को वैधानिक व्यवस्था की ओर मोड़ा जा सकता था, लेकिन इस तरह का कोई प्रयास नहीं हुआ।

वस्तुतः लूई सोलहवें के साथ-साथ सभी प्रमुख व्यक्तियों ने इस सम्भावना के विरुद्ध काम किया। वास्तव में, शुरू से ही लूई एक के बाद दूसरी गलती करता चला गया जिसके चलते फ्रांस में क्रांति का विस्फोट अवश्यम्भावी हो गया।

5. बुद्धिजीवियों का विद्रोहात्मक रवैया:

आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दुर्बलताओं से पीड़ित फ्रांस में बुद्धिजीवियों का क्या रुख था? वे सब-के सब स्थापित सत्ता का विरोध करने में एकमत थे। वे तत्कालीन संस्थाओं की तीखी आलोचना करते थे तथा पूरी व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करना चाहते थे।

वाल्टेयर, रूसो तथा कण्डरसेट कुछ ऐसे बुद्धिजीवी थे जो प्रकृति के नियमों के अनुसार समाज का नवनिर्माण करना चाहते थे। इस कारण मौजूदा शासन और उनके बीच असाधारण अंश तक शत्रुभाव बन गया था।

इन विचारकों ने अपने-अपने तरीकों से फ्रांस में एक ऐसी बौद्धिक वातावरण का सृजन किया जिसमें हर चीज का आलोचनात्मक जाँच-पड़ताल तथा मूल्यांकन किया जाने लगा। फ्रांस के लोग इनकी रचनाओं को बड़े चाव से पढ़ते थे।

क्रांति के विस्फोट में इनकी देनों पर बोलते हुए स्वयं लूई सोलहवें ने कहा था- “इन दो व्यक्तियों (रूसो और वाल्टेयर) ने फ्रांस का सर्वनाश कर दिया ।” बाद में, नेपोलियन ने भी कहा था- “बुर्बो राजा अपने को बचा सकते थे, यदि उन्होंने लेखन को नियन्त्रित किया होता ।”

आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों के इस विश्लेषण के उपरान्त यह स्पष्ट हो जाता है कि क्रांति के पूर्व अर्थात् पुरातन व्यवस्था के काल में फ्रांस शिकायत और स्वतन्त्रता, अनुदारता और उदारता, रोष और उत्प्रेरण का वह समन्वय उपस्थित करता था जो क्रांति के लिए सर्वश्रेष्ठ सामग्री प्रदान करता है ।